नागरी

'हिन्दू विद्यार्थी संघ' के तत्वाधान में

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

मालवीय स्मृति अङ्क

कला भवन पुस्तकालय
बनारस

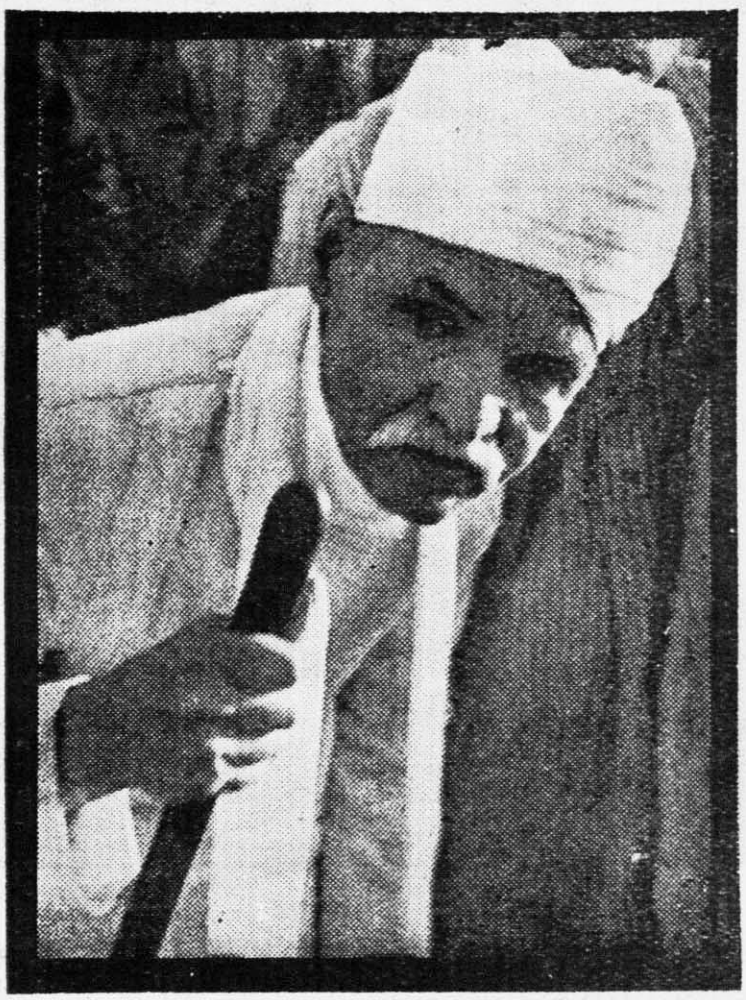

हिन्दू राष्ट्र के पितामह महामना मदनमोहन मालवीय

सम्पादक

महावीर सिंह गहलोत, एम. ए., रिसर्च स्कॉलर।

महामना पं० मदनमोहन मालवीय जी के पार्थिव शरीर का चिता पर अन्तिम दर्शन

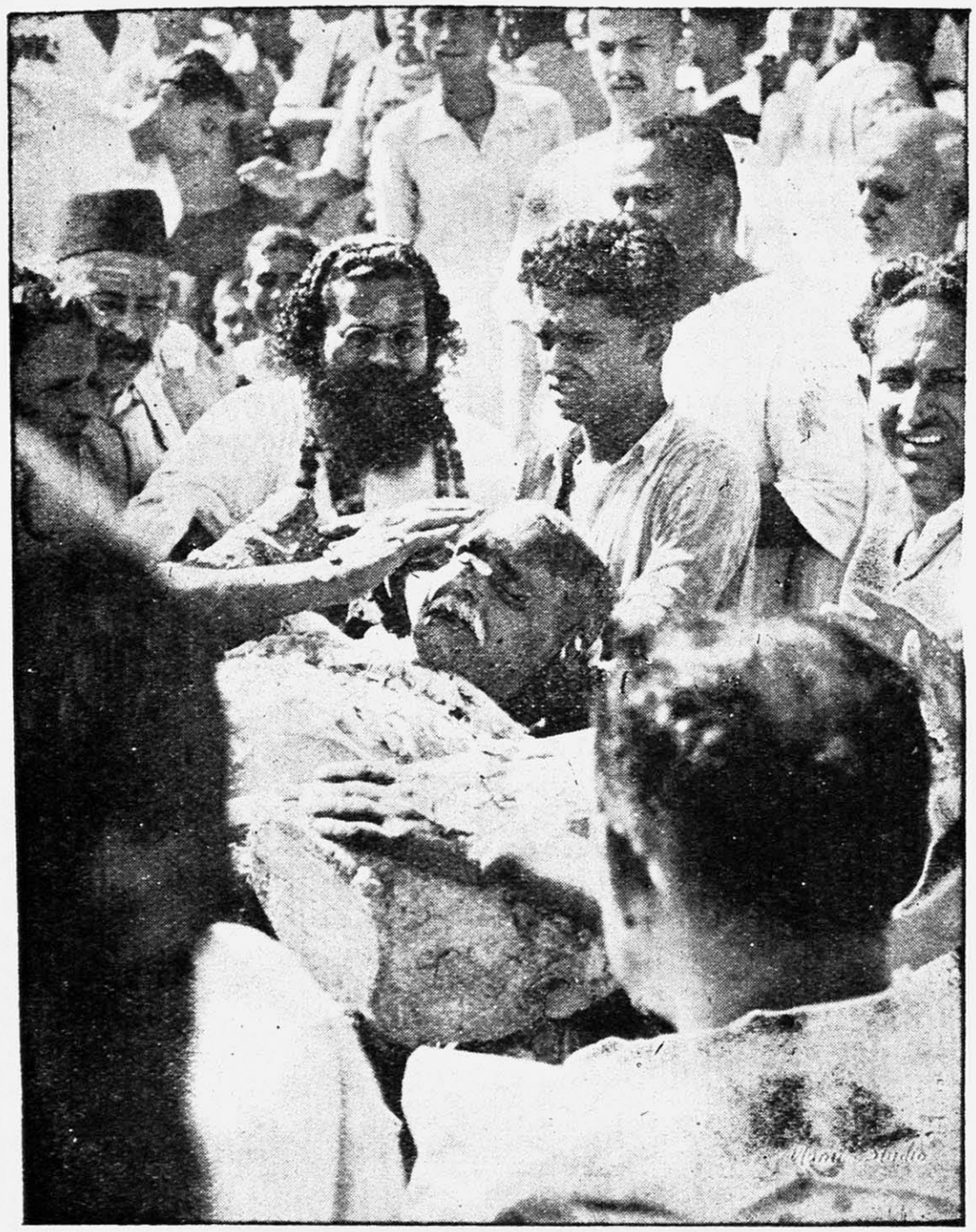

यह दिव्य तथा अमर चित्र १३ नवम्बर सन् १९४६, बुधवार मार्गशीर्ष कृष्ण ५ सम्वत् २००३ के दिन, स्मशान यात्रा में सम्मिलित लगभग दो लाख काशी के नर-नारियों की अपूर्व उपस्थिति में, दिन में २॥ बजे, मणिकर्णिका घाट, चरण-पादुका पर पूज्य मालवीय जी के अग्नि संस्कार के १५ मिनट पूर्व लिया गया है। पं० कैलाशनाथ भार्गव पूज्य मालवीय जी के मस्तक पर बाबा विश्वनाथ जी का प्रसाद, विभूति तथा चन्दन इत्यादि, लगा रहे हैं और समीप में श्री काशी विश्वनाथ जी के महन्त पं० विश्वनाथ प्रसाद त्रिपाठी भी (टोपी पहने) उपस्थित हैं।

नागरी

'नागरी तूँ सर्व गुण आगरी'

हिन्दू विद्यार्थी संघ की विचार धारा

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

मालवीय स्मृति अंक

कीर्ति

सदा के लिये सो गया आज कोई,
कि मरकर अमर हो गया आज कोई।
हृदय क्षुब्ध है, वेदना कह रही है,
समुज्वल रतन खो गया आज कोई॥

भविष्य

भविष्य उज्ज्वल है। निष्काम कर्म में श्रद्धा रखने वाले युवक के लिए फल की चिन्ता नहीं। कायरों का भविष्य अन्धकारमय होता है। राष्ट्र का रक्त जब शरीर की नाड़ियों में मन्द पड़ जाता है, मानसिक गुलामी हृदय को धर दबाती है, आत्मसन्मान खो दिया जाता है, आत्मबल पर विश्वास नहीं होता है, तब ऐसा युवक कहता है कि भाग्य धुँधला है। वह कायर स्वयं तो अकर्मण्य है पर दोष भाग्य को देता है। राष्ट्र के ऐसे नोनिहाल, नेताओं के भाषण सुनकर क्षणिक चहलकदमी करते हैं। कूद फांद मचाते हैं पर उनके जीवन का लक्ष्य छात्र जीवन को छोड़ते ही भिन्न हो जाता है। अपने विद्यार्थी जीवन में न तो वे प्राचीन इतिहास को पढ़ते हैं और न संस्कृति से परिचित होते हैं। हिन्दू राष्ट्र और आर्यों की बूढ़ी जाति की यह सन्तान एक अधकचरी शिक्षा पाकर संसार में आती है। तब प्रचार यंत्रों से वे जो कुछ सुनते हैं उन्हें सत्य ज्ञात होता है। उनमें इतनी बुद्धि नहीं होती है कि वे जांच कर सकें कि कहीं मेरे नेता इतिहास को काला तो नहीं कर रहा है। यह तो हुई बौद्धिक बात। शरीर की दशा तो आप "कागजी नौजवानों" को देखकर लगा ही सकते हैं। युवक का ओज वहां नहीं होगा।

युवक का मुँह आज काला है। दंगों में हजारों स्त्रियों का सतीत्व लूटा गया, उन पर बलात्कार हुए, भगाई गईं, कत्ल की गईं, पर भाई और सपूत कहलाने वाला यह युवक नपुंसक की भांति बैठा रहा और अब भी राखी का अधिकारी बनता है। कालेज की हड़ताल में वह अग्रगणी रहेगा और रहेगा उच्छृङ्खलता में। इन दो चरितोंके अतिरिक्त आजतक इन अनियंत्रित कालेजी युवकों ने क्या किया? लेखा लेने की बात है। विभूति पूजक भारत आज नेता पूजक हो गया है। अंध श्रद्धा ने मनन शक्ति पर तुषारपात कर ज्ञान को ओझल कर दिया है। भारतमाता की जय बोलने वाले, क्यों भूल जाते हैं कि जन्मभूमि की खंडता के समर्थक देशद्रोही हैं, कामधेनु के वधिक हत्यारे हैं, राष्ट्र वाणी को वर्ण-शंकर करने वाले राष्ट्रघातक हैं। नौआखली की कहानी सुनकर यदि मुर्दा भी हिल सकता है तो तुमने क्या किया? क्या बिहार स्वदेशी है और नौआखली विदेशी? राष्ट्रीयता को जाति और देश को धर्मशाला मानने वालों से हमें बचना पड़ेगा। तर्क से हम सत्य सिद्ध होंगे और संघशक्तिमें बलवान, इसी भविष्य को कर दिखाने के लिए यह आरम्भिक प्रयास है। परमपिता से यह कामना, वृद्धों से यह आशीर्वाद, सहपाठियों से यह सहयोग अपेक्षित है।

महावीर सिंह गहलोत

राष्ट्रभाषा की परम्परा

(श्री० कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी)

"हिन्द की एक राष्ट्रभाषा न थी, यह भ्रमपूर्ण है। जब तक भारत में मध्य-देश का स्थान नहीं समझा जाता तब तक हिंदी का महत्व भी समझा नहीं जा सकता। मध्यदेश भारत का उत्तमांग है। वहीं उसका संस्कार जन्मा, विकसा, परिपक्व हुआ। उसकी मूलभाषा तो संस्कृत। उसका आत्मा ब्रह्मावर्त ने घड़ा। सरस्वती, गंगा और जमुना ने इसके जीवन-प्रवाह को झीला। श्रीकृष्ण की मथुरा इसका प्राचीन मध्यबिंदु है। जनमेजय परीक्षित का आसिदवन्त इसकी पुरानी राजधानी। संस्कृत इसकी वाणी। पालि भी उसी की भाषा पर रची हुई साहित्य भाषा। पश्चिमी हिंदी की यह मातामही। मध्यकाल (५५० ई० से १००० ई०) में कन्नौज उसकी राजधानी। राजशेखर उसका कवि-सम्राट्। वह कहता है कि मध्यदेश के लोग तो सभी भाषाओं में निष्णात थे, "यो मध्ये मध्यदेशं निवसति स कविः सर्वभाषानिष्णः"। संस्कृत उनको प्रिय थी। पाँचाल के कवि सर्व-श्रेष्ठ थे। उनकी शैली को शोभा देनेवाली उनकी वाणी थी। उनकी शब्द-रचना सुंदर थी। उनकी कृतियाँ नियमानुसार थीं। उनका उच्चारण मधु-सा मीठा था। पाँचाल के लोग आर्यावर्त के भूषण थे। उनकी स्त्रियाँ अद्भुत थीं। कवि (बाल-रामायण १०, ९०) कहता है उनकी ढब-छब देश भर के लोगों के लिए अनुकरणीय थी। कन्नौज ५०० वर्षों तक हिन्द की रानधानी रही। सन् ८०० से ९५० ई० तक प्रतिहार गुर्जरेश्वर सम्राटों ने इस पर राज्य किया। राजशेखर कहता है (बाल-भारत १, ७–८) कि इस वंश के महान् नरेश मिहिर भोज, महेन्द्रपाल और महीपाल को आर्यावर्त का महाराजाधिराज कहा जाता था। मेवाड़ और गुर्जरत्रा (आज का मारवाड़) इन सम्राटों का उत्पत्ति-स्थान। बाप्पा-रावल का वंशज हर्षराज तो सम्राट् मिहिरभोज का सामंत। उसका पुत्र गुहिल द्वितीय सम्राट् की आज्ञा से बंगाल के राजा देवपाल के घोड़े को पकड़ कर लाया।

इस मध्यदेश की साहित्यिक भाषा शौरसेनी प्राकृत। इसकी देश-भाषा का साहित्यिक रूप शौरसेनी अपभ्रंश। पश्चिम मध्यदेश की देश-भाषा का नाम 'गुर्जरी'। मेवाड़ी तथा स्वात और काश्मीर के गूजरों की बोली 'गुजरी' उसका अवशेष। इस समय उत्तर पूर्व मध्यदेश और मथुरा के आस-पास शौरसेनी अपभ्रंश से मिलती-जुलती बोल-चाल की भाषा। इस शौरसेनी देश भाषा के नमूने का पता नहीं। पर गुर्जरी 'अउ' कारान्त भाषा—शौरसेनी आकारान्त। दोनों के बीच बोलने समझने में अधिक भेद नहीं। अपभ्रंश साहित्य की राष्ट्रभाषा

थी। प्रान्त प्रान्त में देश-भाषा के छोटे-मोटे भेदों से इसमें भेद पड़ता गया। 'सप्तविंशत्यपभ्रंशः'। गुजरात से आसाम तक यह प्रचलित थी। इसकी साखी पूर्व बंगाल के दोहों में मिलती है। छठी सदी के आस-पास के 'जोइंदु' के 'परमात्मप्रकाश' के दोहे (इसकी साक्षी हैं)। अभी मैं काश्मीर के गुर्जरों का लोकगीत ले आया हूँ। ये लोग सन् १००० में राजस्थान से ऊपर की तरफ गये। हजार वर्षों से उन्होंने अपनी भाषा रखी है। दसवीं सदी के धनपाल की 'भविष्य कथा' और बारहवीं सदी में तो (सिद्धहेम ८-४-३१६ आदि द्वारा) राष्ट्रभाषा के अनेक उदाहरण मिलते हैं। बंगाल बिहार के सहजियापंथ की (पुस्तकों) और उसी काल के एक अलभ्य ग्रंथ 'मुंजप्रबंध' के अवशेष दोहे (राष्ट्रभाषा के स्वरूप के अमूल्य उदाहरण हैं)। जब तुर्कों ने दिल्ली में सलतनत स्थापित की तब (१) समस्त भारत में संस्कार, साहित्य और धर्म की एक मात्र भाषा संस्कृत थी, (२) नर्मदा के उत्तर में भद्र लोगों की और उसके दक्षिण में विद्वन्मण्डली की राष्ट्रभाषा संस्कृत थी, (३) नर्मदा के उत्तर से मथुरा तक गौर्जरी, उत्तर में बनारस तक शौरसेनी, उसके आगे अवधी और बिहारी देश-भाषायें प्रचलित थीं। पूर्व बिहार में और उड़ीसा में यही भाषा बंगाली में मिश्रित हो जा रही थी, (४) तुर्की सलतनत के कारण दिल्ली प्रदेश पूर्व पंजाब और पश्चिम संयुक्त प्रान्त में फारसी बोलने वाले तुर्कों और हिंदियों के बीच व्यवहार की एक नई भाषा प्रकट हुई। तुर्कों के आक्रमण के समय नर्मदा के उत्तर में सब के समझने लायक, और प्रत्येक प्रान्त के विद्वानों के लिखने लायक ऐसी राष्ट्रभाषा प्रचलित थी और संस्कृत की सतत प्रेरणा से भारत के आत्मा का दर्शन करने का वाहन बनी थी।

तुर्क आये। पंजाब और दिल्ली में पड़ाव डाला और व्यावहारिक भाषा का जन्म हुआ। उस समय अपभ्रंश के मुख्य विभाग में पंजाबी, पश्चिमी, पूर्वी (अवधी, बाघेली और छत्तीसगढ़ी, बिहारी) (भोजपुरिया, मैथिली, मगही, छोटा नागपुरी,) राजस्थानी (मारवाड़ी, जयपुरी, मालवी, मेवाडी और गुजराती) ये सब के सब समझने लायक स्वरूप थे। धीरे-धीरे व्रजभाषा, कन्नौजी, बुंदेली और मेरठ, रोहिलखंड और अंबाला की भाषा बनी और इन बोलचाल की भाषाओं से तुर्कों और हिंदियों के बीच व्यवहार की भाषा बनी। दिल्ली तुर्कों की मुख्य राजधानी बनी। उसके आस-पास इस भाषा का व्यवहार होने लगा। पर दिल्ली की राजभाषा फारसी थी। प्रारंभिक हिंदी तो बाजारू थी। सलतनत के प्रदेश के बाहर संस्कृत और व्रजभाषा की प्रेरणा से साहित्यिक भाषा विकसने लगी और व्यवहार की भाषा जैसी की तैसी एक ही रही। हिंदकी एक राष्ट्रभाषा न थी, यह भ्रमपूर्ण है। [अ० भा० हि० सा० स० (उदयपुर) के अध्यक्षपद से।]

हिन्दी माध्यम द्वारा शिक्षा

(स्व० महामना मदनमोहन मालवीय)

भारतवर्ष उस समय तक अपनी समृद्धि फिर नहीं प्राप्त कर सकता जब तक आधुनिक विज्ञान का अध्ययन और क्रियात्मक प्रयोग इस देश में एक प्रकार से एक स्वाभाविक वस्तु न बन जाय। विज्ञान उस समय तक एक राष्ट्रीय सम्पत्ति नहीं बन सकता जबतक उसका अध्ययन विदेशी भाषा के माध्यम द्वारा होता रहेगा। उस समय तक विज्ञान का ऐसा विस्तार नहीं हो सकता कि वह इस देश की जनता की उस दरिद्रता का जो फैली हुई है दूर करने का साधन बन जाय, जब तक उसका पुस्तकी ज्ञान और क्रियात्मक प्रयोग दोनों ही भारतवासी अपने ही देश में अपनी ही भाषा में प्राप्त नहीं कर पायेंगे। जो संस्कृत में शिक्षा चाहेंगे उन्हें वह शिक्षा दी जायगी। जो धर्मशिक्षक बनना चाहेंगे उनके लिए संस्कृत शिक्षा अनिवार्य होगी। दूसरों के लिए संस्कृत का इतना ज्ञान पर्याप्त समझा जायगा जिससे वह संस्कृत में सुलभ धार्मिक ग्रन्थों को समझ सकें और अपनी देशी भाषा पर पूरा अधिकार प्राप्त कर सकें। दूसरों को पूरी शिक्षा उस देशी भाषा के माध्यम द्वारा दी जायगी जिसे देश में सबसे अधिक लोग समझ सकते हैं और वह भाषा हिन्दी है। ऐसी आशा की जाती है कि जो भारतीय विद्यार्थी टोकियो युनिवर्सिटी में शिक्षा पाने के लिये जापानी भाषा भी सीखने के लिए तैयार रहते हैं वह इसे बुरा न मानेंगे, अगर उनको इस विश्वविद्यालय में शिक्षा पाने के लिए हिन्दी का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त करना पड़े। आज भी बहुतेरे विद्यार्थी मद्रास से बनारस आते हैं और वही एक प्रान्त है जहाँ कि प्रायः सभी लोग हिन्दी नहीं जानते। वह आते हैं संस्कृत पढ़ने पर थोड़े ही दिनों में हिन्दी भी सीख लेते हैं। (अंगरेजी माध्यम द्वारा शिक्षा न देने के दो कारण हैं, पहला कारण यह है कि) जब हमारा उद्देश्य यह है कि जो कुछ यहाँ बतलाया जाय, वह देश के अधिक-से-अधिक युवकों को उपलब्ध होवे तो हमें उसी भाषा को माध्यम बनाना चाहिए जिससे अधिकांश लोग परिचित होंगे या जो आसानी से सीखी जा सके। ऐसा माना जाता है कि जितना समय केवल अंग्रेजी भाषा का इतना ज्ञान प्राप्त करने में लगता है, जितना शिक्षक की बातें समझने के लिए आवश्यक है उतना ही समय यदि देशी भाषा द्वारा शिक्षा दी जाय तो विषय का पूरा ज्ञान प्राप्त करने के लिए काफी होगा। दूसरा कारण यह है कि यदि आरम्भ से ही शिक्षा देशी भाषा द्वारा न दी जायगी तो देशी भाषा में पाठ्य-

पुस्तकों के बनने में बहुत विलम्ब लग जायगा, जिसका नतीजा यह होगा कि अंग्रेजी ही माध्यम बनी रहोगी। (इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये मार्ग में कठिनाइयों का आना सम्भव है पर) कोई ऐसी कठिनाई नहीं हो सकती जिसको अध्यवसाय और साहस द्वारा दूर नहीं किया जासकता। जो कुछ भी करना है उसका आरम्भ तो कर देना ही चाहिए, चाहे उसके पूरा करने में जितना भी समय क्यों न लग जाय।"

"जब हिन्दू विश्व-विद्यालय का विचार पहले पहल उपस्थित किया गया था तो यह प्रस्ताव किया गया था कि शिक्षा का माध्यम देशी भाषा होगा। विचार था कि यह देशी-भाषा हिन्दी होगी क्योंकि वही देश में सबसे अधिक समझी जाती है। इस विचार का समर्थन १८५४ के खरीते में भी मिलता है जिसमें कहा गया है कि योरोपीय कला और विज्ञान का ज्ञान आहिस्ते-आहिस्ते भारतीय भाषाओं द्वारा सभी लोगों तक पहुँचाया जायगा। पर ऐसा समझा जाता है कि यह देशी भाषाओं में उपयुक्त पुस्तकों और ग्रन्थों के अभाव में आज नहीं किया जा सकता है। यह भी मान लेना ही पड़ेगा कि किसी एक भाषा को ऐसे विश्व-विद्यालय में जहां भारतवर्ष के सभी विभागों से विद्यार्थी आवेंगे, माध्यम बना लेने में बहुत ऐसी अमली कठिनाइयां आजायेंगी जिनसे आरम्भ में बचना ही अच्छा होगा। इसलिए यह तय किया गया है कि शिक्षा अंग्रेजी के माध्यम द्वारा ही दी जायगी—लेकिन जैसे-जैसे देशी भाषायें उन्नत होती जायेंगी विश्व-विद्यालय को अधिकार होगा कि जिन भाषाओं को वह उपयुक्त समझे और जिनमें शिक्षा दी जा सके उसको वह माध्यम बना ले।"

"कला विज्ञान एवं हुनर और पेशा सम्बन्धी विषयों पर उपयुक्त पाठ्य पुस्तकों और ग्रन्थों को देशी भाषाओं में निर्माण करना और निर्माण में प्रोत्साहन देना होगा। (और तब तक) अंगरेजी के माध्यम द्वारा शिक्षा दी जायगी। पर जैसे-जैसे देशी भाषायें उन्नत होती जायेंगी, अधिकारियों को अधिकार होगा कि उनमें से एक या अधिक को उन विषयों में शिक्षा देने का माध्यम मान ले जिसमें वह समझें कि ऐसी शिसा दी जा सकती है ओर देना लाभकर होगा। अंगरेजी एक दूसरी भाषा की तरह सिखायी जायगी।"

दीक्षांत भाषण

(डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद)

कुलपति, कुलनायक, विद्यापरिषद के सदस्य तथा स्नातक गण !

आज विश्वनाथ पुरी काशी सूनी है। हिन्दू विश्वविद्यालय सूना है। हम सब हजारों की संख्या में यहां उपस्थित हैं, तो भी यह सभा सुनी है। आज हमें अनुप्राणित करने वाला, हमारा पथ-प्रर्दशन करनेवाला, इस विश्व-विद्यालय को जन्म देनेवाला, इसका पालन पोषण करनेवाला, हमारे बीच में अपने पार्थिव शरीर के साथ नहीं है। इसलिए सब सूना है। पर आत्मा अमर है, कीर्ति अमर है, यश अमर है। वही आत्मा आज हमें देख रही है। वही हम सबको अनुप्राणित करती रहेगी, कठिन घड़ियों में उत्साहित करती रहेगी, जैसा वह पार्थिव शरीर के साथ किया करती थी और हमारी शंकाओं और निराशाओं को जैसे सूर्य की किरणें अन्धकार को दूर करती हैं, छिन्न-भिन्न करती रहेगी, और हमारे सामने सादा जीवन और उच्च विचार के महान आदर्श की चिरकाल तक उपस्थित करती रहेगी। पूज्यपाद मालवीयजी पार्थिव शरीर के साथ हमारे बीच में नहीं हैं, पर उन्होंने जो रास्ता दिखलाया है—इस विश्व-विद्यालय का अपने पुरुषार्थ और तपस्या द्वारा निर्माण करके कार्य-कुशलता और अध्यवसाय का जो आदर्श बताया है, वह हमारे जीवन के लिए और आनेवाली पीढ़ियों के जीवन के लिए बहुमूल्य थाती है, जिस पर भरोसा करके हम दृढ़तापूर्वक आगे बढ़ सकते हैं और बढ़ेंगे। तीस बरस बीत चुके जब इस विश्व-विद्यालय की स्थपना काशी की पवित्र भूमि पर हुई थी। इन तीस बरसों में विश्व-विद्यालय इस तरह आकार प्रकार में दिनों-दिन उन्नति करता गया है, पर तो भी हम यह नहीं कह सकते कि जो आदर्श आरम्भ में रखा गया था, वह पूरा हो गया। अभी हमारे लिए बहुत कुछ करने को रह गया है और उसको पूरा करने का भार सारे हिन्दू-समाज पर विशेष करके इस विश्व-विद्यालय में शिक्षित विद्यार्थियों पर है। मैं कुछ ऐसी बातों की ओर आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ, जिनके पूरा हुए बिना पूज्यपाद मालवीयजी की आत्मा को शान्ति नहीं मिल सकती थी।

पूज्यपाद मालवीजीने हिन्दू विश्व-विद्यालय की आरम्भिक विज्ञप्तियों और विधान में इस बात को खुले और स्पष्ट शब्दों में घोषित किया कि समय पाकर वह विश्वविद्यालय में हिन्दी को ही शिक्षा का माध्यम बना कर रहेंगे। पिछले तीस बरसों में हिन्दी साहित्य की अभूतपूर्व वृद्धि हुई है और आज यह निर्विवाद

है कि उसके भंडार में प्रायः सभी बिषयों के उच्च कोटि के ग्रंथ पाये जा सकते हैं। जो कठिनाई पाठ्य-पुस्तकों के सम्बन्ध में अनुभव की गयी थी, वह बहुत हद तक दूर हो चुकी है और जो कमी अभी है, वह आसानीसे और शीघ्र दूर की जा सकती है। उर्दू का साहित्य हिन्दी के साहित्य से अधिक उन्नत या प्रौढ़ नहीं कहा जा सकता है। तो भी उसमानिया यूनिवर्सिटी में उर्दू को कई बरसों से माध्यम मान लिया गया है और जिन बिषयों में मौलिक ग्रन्थ नहीं हैं, उन विषयों के मौलिक ग्रंथों को अनुवादित कर सहज और सुलभ बना दिया गया है। कोई कारण नहीं कि हिन्दी में भी वैसा ही क्यों न किया जाय। नागपुर की यूनिवर्सिटी हमारे इस विश्वविद्यालय से अवस्था में बहुत छोटी है। उसका प्रसार भी सारे सूबे में हैं और वहाँ दो भाषायें प्रचलित हैं—हिन्दी और मराठी। तो भी उसने हिम्मत करके उत्साह-पूर्वक निश्चय कर लिया है कि वह हिन्दी और मराठी द्वारा ही शिक्षा देगी और विद्यार्थियों की परीक्षा लेगी। इस नये विधान का आरम्भ तो इसी वर्षमें हो जायगा, पर चार-पाँच बरसों में यह सभी कक्षाओं और वर्गों में प्रचलित हो जायगा, अर्थात् चार पांच बरषों के बाद उस यूनिवर्सिटी के किसी विभाग में और किसी कक्षा में विदेशी भाषा के माध्यम द्वारा शिक्षा नहीं दी जायगी। काशी विश्वविद्यालय भी यदि अपनी प्रारम्भिक नीति पर चलने को तैयार हो जाय और अपने विधान की उन धाराओं को कार्यान्वित करने पर तत्पर हो जाय, जिनका उल्लेख मैंने ऊपर किया है, तो मेरा विश्वास है कि इसके द्वारा शिक्षा के रूप, प्रकार और प्रसार में एक भारी परिवर्तन आजायगा। यह विश्वविद्यालय एक प्रान्त या प्रदेश का नहीं है, सार्वदेशिक है—अखिल भारतीय है। इसलिए यहां जो कुछ होगा उसका प्रभाव भी सार्वदेशिक होगा और यहाँ हिन्दी का माध्यम बनना सारे देश के एक अत्यन्त शुभ और मंगलमय कृत्य होगा। मेरा यह भी विश्वास है कि पूज्यापद मलवीयजी की अत्मा को अपनी इच्छा की पूर्ति देखकर सन्तोष होगा और वह इसकी उन्नति के लिए आशीर्वाद देगी। (भाषण के कुछ अंश)।

अन्तिम आदेश

(हिन्दू राष्ट्र के पितामह महामना मालवीय का भीष्म शैय्या से दिया)

भीष्म शैय्या पर पड़े मालवीयजीने बार-बार दो ही प्रश्न पूछे थे, नौआखली का क्या हाल है ? क्या गांधीजी ने अनशन किया ? धीर बँधाने के लिए कुछ-न-कुछ उत्तर दिया ही जाता था, पर पितामह की आत्मा फुसलाई न जा सकी। बिहार में दंगा-दमन के लिए बमवर्षा हुई, पर पितामह को बताया नहीं गया। हजारों शहीदों का मौन आर्त्तनाद का भान उनके हृदय में होता गया और बूढ़ा पितामह अश्रु बहाता, संसार छोड़ चला और वह काल-दर्शक महामना कहता गया·····

'मैं अनुभव करता हूँ कि मानवता संकटमें है। हिन्दू संस्कृति और धर्म भी खतरे में हैं। आज एक असाधारण वस्तुस्थिति उत्पन्न हो गयी है। हिंदूओं को चाहिये कि सर्वसाधन सम्पन्न हो कर संघटित हो जायँ और अपनी रक्षा की समुचित व्यवस्था कर लें। आत्म-रक्षा और आत्म-संयम हमारा व्रत और इस भूमिमें स्वयं रहना तथा मुसलमानों को रहने देना हमारा उद्देश्य होना चाहिये।

वर्षों से हिंदू जी जानसे अथक परिश्रम करते रहे कि सच्ची हिंदू मुस्लिम एकता कायम हो। वे सहयोग भी करते रहे और सहिष्णु भी बने रहे, किन्तु मुझे इस बातका दुःख है कि अधिकांश मुसल्मानों ने सहिष्णुताका अर्थ हिंदुओं की कमजोरी समझा। वे हिंदुओं से सहयोग भी करना नही चाहते। उन लोगों के प्रति हम दया नहीं दिखा सकते जो हिंदुओं को शान्तिपूर्वक रहने देना नहीं चाहते। यदि हिंदू संघटित नहीं हुए तो वे अब बच नहीं सकते। मैं यह वक्तव्य कोई अशान्त चित्तसे नहीं, अपितु सोचकर दे रहा हूँ।

मातृभूमि, धर्म, संस्कृति और अपने हिंदू भाइयों के प्रति भी हिंदू नेताओं को अपना कर्तव्य पालन करना चाहिये। यह परमावश्यक हो गया है कि हिंदू संघटित होकर निःस्वार्थ और देशभक्त कार्यकर्त्ताओं का दल तैयार करने के लिये सचेष्ट हो जायँ। उन कार्यकर्त्ताओं का एकमात्र उद्देश्य सेवा होना चाहिये। साथ ही, विभिन्न जातियों का भेद-भाव और अन्तर भुलाकर हिंदू एकताबद्ध हो जायँ ताकि हिंदुओं का अस्तित्व तथा उनकी संस्कृति और आदर्श अक्षुण्ण बनाये रखने के लिये हम भरपूर उद्योग कर सकें।

मुस्लिम नेताओं के 'विषैले भाषण', अज्ञात मुस्लिम संस्थाओं द्वारा तैयार किये गये गुप्त कागजात, लीग के राजनीतिक व्यवहार, कलकत्ते के नरमेघ तथा पूर्वी बंगाल की भीषण अराजकता आदि घटनाओं से किस हिन्दू का हृदय

क्रोधाग्नि से प्रज्वलित हो, हिंदू जाति की रक्षा के लिये कुछ कर डालने को फड़क नहीं उठेगा ? यदि हिंदू जाति जीवित रहना चाहती है तो वह अपना कर्तव्य समझे। दर्शनों से हिंदुओं के विचार धार्मिक की अपेक्षा राष्ट्रीय रहे हैं। अहिंसा में विश्वास और सत्य में प्रेम रहा है। एक ही राष्ट्र के दो भाइयों से झगड़ा-फसाद करना नहीं चाहते। पर मुसल्मानों ने हिंदुओं की इस भावना से अनुचित लाभ उठाया है। हिन्दू-मुस्लिम सङ्घर्ष की जड़ झूठा प्रचार है, और इस प्रचार में मुसलमान सफल रहे हैं। हिंदू वर्षों से सताये जा रहे हैं। राष्ट्रीय संस्था कांग्रेस और साम्प्रदायिक संस्था मुस्लिम लीग दोनों को समानाधिकार दिये गये हैं और इस प्रकार बहुसंख्यक समुदाय के अधिकार कुचले गये हैं। राष्ट्रीय भारत के नामपर हिंदुओं की आकांक्षाएँ, संस्कृति और धर्म विकासकाल में ही धूल में मिलाये जा रहे हैं। हिंदुओं तथा अन्यान्य समुदायों की राजनीतिक भलाई कांग्रेस के हाथ में भले ही सुरक्षित समझी जाय, किन्तु जो समस्या विशुद्ध साम्प्रादायिक है, जो प्रश्न हिंदुओं के धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक हितों से सम्बन्ध रखते हैं, उनपर अन्तिम निर्णय हिंदू-संस्था ही दे सकती है। धर्म-परिवर्तन रोका ही जाना चाहिये। विधर्मी बनाये गये हिंदुओं को पुनः हिंदू बनाने के लिये तो सुविधाएँ मिलें ही, साथ ही उन मुसल्मानों को भी सुविधाएँ मिलें जो हिंदू बनना चाहते हों। हिंदू भय छोड़कर वीर और बलवान् बनें। अपने बचाव के लिये वे सैनिक शिक्षा प्राप्त करे तथा केन्द्रीय स्वयंसेवक-दल तैयार करें। वे यह भी घोषित कर दें कि हिंसाद्वारा वे किसी का कुछ बुरा करना नहीं चाहते।

धार्मिक भावनाओं से प्रेरित होकर हिंदुओं को चाहिये कि वे मुसल्मानों को ललकार दें। अपने बचावका ऐसा प्रबन्ध हो कि कोई भी आक्रमण सफल न हो। किसी भी मूल्यपर शान्ति स्थापित करने से इस समस्या का समाधान नहीं किया जा सकता। भारतीयों को चाहिये कि वे हिंदुओं की सेवा करें, बर्बरतापूर्ण आक्रमणों से हिंदू अपनी संस्कृति और धर्म उन्मूलित होने न दें, न अपनी संख्या ही घटने दें। हिंदू हिंदुओं के लिये सहिष्णु बनें ; पर उन मुसल्मानों के प्रति सहिष्णु न बनें जो हिंदुओं को शान्तिपूर्वक रहने देना नहीं चाहते। मियाँ गजनफर अली खाँ तथा अन्यान्य लीगी नेताओं ने अपनी अशिष्ट भाषाद्वारा हिंदुओं को चुनौती दे दी है। मैं उनकी-जैसी भाषा में कुछ कहना नहीं चाहता। मैं हिंदुओं से यह भी नहीं कहता कि जहाँ मुसल्मान कम हैं वहाँ उनपर चोट करें, बल्कि मैं चाहता हूँ कि जहाँ हिन्दू कम हैं वहाँ वे संघटित होकर आत्म-रक्षा करें।'

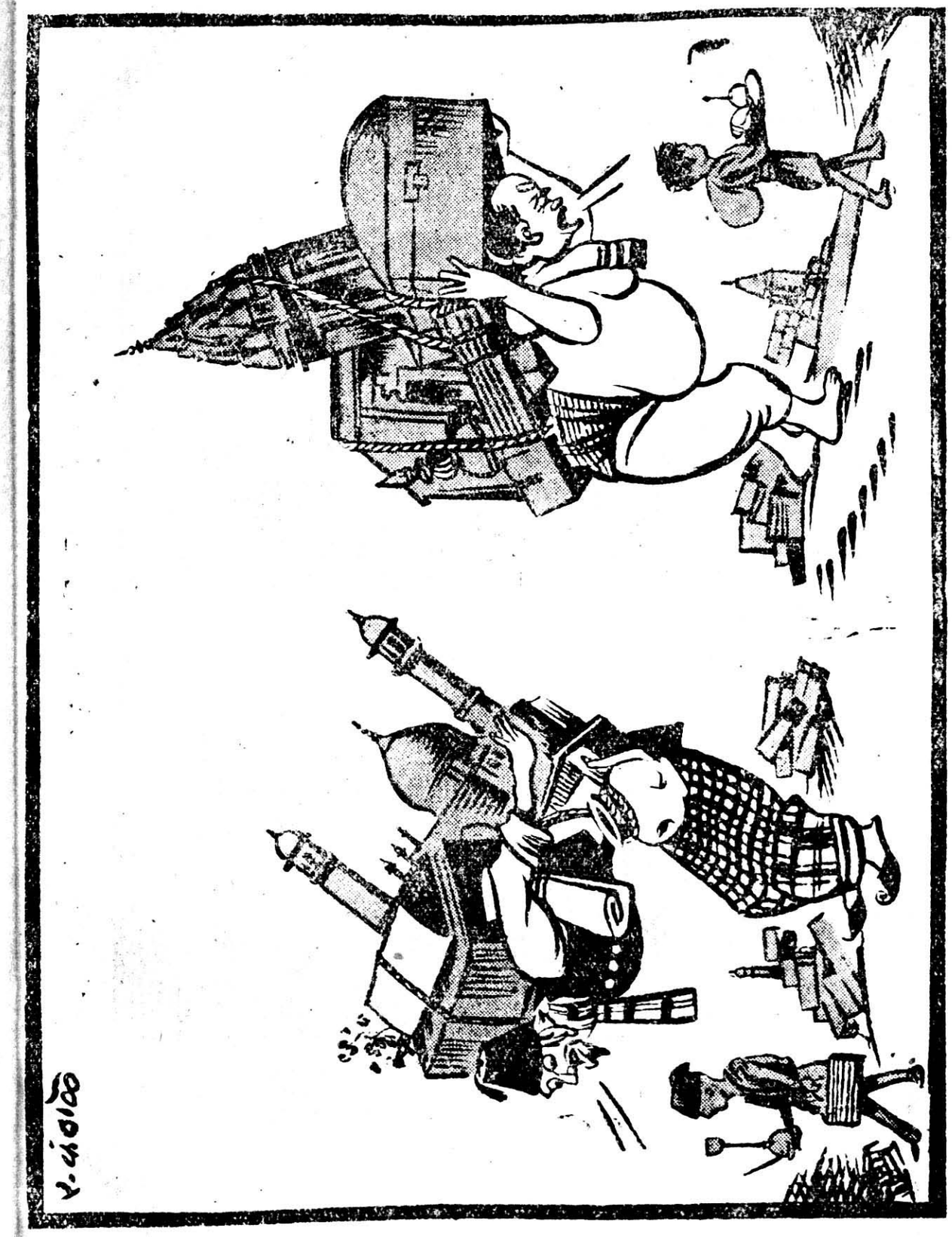

मालवीयजी की जीवन-यात्रा

१८६१—ता० १५ दिसम्बर बुधवार (पौषकृष्ण ८ सम्वत् १९१८ वि०) को ६ बजकर २४ मिनट पर प्रयाग में जन्म। पिता पंडित ब्रजनाथ व्यास और माता मूना देवी।

१८७८—विवाह।

१८७९—एण्ट्रेंस की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए।

१८८४—म्योर सेण्ट्रल कालेज प्रयाग (कलकत्ता विश्वविद्यालय) से बी० ए० हुए। और गवर्नमेन्ट हाई स्कूल में अध्यापक नियुक्त हुए।

१८८४—'मध्य हिन्दू समाज', प्रयाग नामक सभा की स्थापना।

१८८७—'हिन्दुस्तान', प्रयाग के सम्पादक हुए।

१८९३—वकीली धंधा आरम्भ किया।

१९०२—प्रान्तीय लेजिस्लेटिव कॉउन्सिल के सदस्य चुने गए।

१९०८—अ० भा० हिन्दू महासभा की स्थापना में योग।

१९०९—कांग्रेस (लाहौर) के सभापति बने।

१९०९—अँगरेजी दैनिक पत्र 'लीडर' की स्थापना।

१९१४—प्रयाग सेवा-समिति की स्थापना।

१९१६—काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना।

१९१८—कांग्रेस (दिल्ली) के सभापति बने।

१९२३—अ० भा० हिन्दू महासभा के सभापति चुने गए।

१९२४—'हिन्दुस्थान टाईम्स' का सञ्चालन।

१९२६—स्वराज्य पार्टी की स्थापना।

१९३०—तिलक दिवस पर कारावास।

१९३१—गोलमेज परिषद लन्दन में सम्मिलित।

१९३२—दिल्ली पहुँचते पुनः कारावास मिला।

१९३४—कांग्रेस में 'राष्ट्रीय पार्टी का संघठन किया।

१९३९—हिन्दूविश्वविद्यालय के कुलपति पद को त्याग दिया। संरक्षक (रेक्टर) चुने गए।

१९४६—ता० १२ नवम्बर मंगलवार (मार्गशीर्ष कृष्ण ३ संवत २००३) को ४ बजकर १३ मिनट पर महानिर्वाण। अगले दिवस मध्याह्न को दो बजे काशी के मणिकर्णिका घाट के विष्णु पद पर शवदाह। आयु—८४ वर्ष १० माह १७ दिन।

सौन्दर्य उपासक

(ले० श्री० मुकुन्द शास्त्री)

'वो आ रही है' कंधे से धक्का लगाते रजनीबाबू बोले। साथी रमेश जरा चौंका पर शीघ्र ही सतर्क हो गया। उषा बेला, ग्रीष्म ऋतु, मन्द पवन और निस्तब्ध वातावरण। विश्वविद्यालय के बोटेनिकल गार्डन में वे दोनों साथी चहल कदमी कर रहे थे। उनकी आँखों में दूर की धुँधली छाया समा गई। रजनी बाबू ने मुँह खोला, "क्या अदा है, यार देखो तो मालिक ने भी चोखटा ठीक दिया है। रमेश बोले, "मारो गोली, कहाँ अटकते हो, चलो लौट चलें"। रजनी न मानें रुक गए। रमेश भी सटकर खड़ा हो गया। रजनी अपने साथी पर रंग जमाने लगे; दार्शनिक बन गए। लगे तुलसी के नाम पर दुहाई देने, "नारि न मोह, नारि के रूपा"। "हाँ हाँ, इतना तो हम भी मानते हैं, रमेश ने समर्थन किया, "ब्यूटी निरखने के लिए है, स्पर्श के लिए नहीं"। रजनी को साहस बँधा और फतवा दिया, "ठीक है, हम तो सौन्दर्य उपासक हैं और क्यों रमेश नेत्र भी तो भगवान ने इसीलिए दिए हैं?"

दोनों साथी न मालूम क्यों एक दूसरे के सामने न देखकर अपनी सौन्दर्य उपसना के सिद्धान्तों की चर्चा कर रहे थे। फ्रायड की चर्चा हुई। कम्यूनिस्टों के स्वछन्द संगम की नोंक हुई। मुस्लिम विवाह एक ठेका है कि बात उठी। वर्धा आश्रम में भाईजी और बहनजी का वातावरण काम दहन करता है कि सिद्धि हुई। और न मालूम कितने भाव अव्यक्त ही रह गए। दोनों साथी "राहे उल्फत' में मजा लेते इनना और मान बैठे कि प्रभु ने तो रसपान का निषेध नहीं किया है। खुले आँगन में प्रकृति ने सभी को मुक्त बना कर जन्म दिया है। रजनी ने रमेश को समझा दिया कि धर्म-संकोच तो मानसिक नंपुसकता है। संयोग की उत्सुकता तो नर नारी में समान है। तब संकोच क्या? पञ्चशर का सम्मोहन उन पर था। मन को समझा दिया गया। दोनों अगल अलग सोच रहे थे पर चिंतन यही था कि यदि उभय पक्ष सहमत हो तो वहाँ अन्याय नहीं होगा। इस में बुरा भी क्या है? एक दूसरे की सहायता ही तो है। और रही मिमंत्रण की बात सो तो स्पष्ट ही है कि मदन-कोष में ना को हाँ मानना ही रसिकों के लिए शुभ है। तर्क से सभी सिद्ध हो गया, तब सत्य क्यों

(शेष पृ० १२ पर देखिए)

भाषा और लिपि द्वारा राष्ट्र संगठन

राष्ट्र भाषा की समस्या स्वार्थी विद्वानों के हाथ में पड़ कर सड़ रही है। सीधी सी बात है कि भाषा बहता नीर है। ठोक पीट कर भाषा का स्वरूप गढ़ा नहीं जा सकता। नेता लोग भूल जाते हैं कि भारत की राष्ट्र भाषा बनाने का अधिकार हिन्दी और उर्दू वालों का ही नहीं है वरन् भारत की सम्पूर्ण प्रचलित भाषाओं वालों का भी है। हिन्दी की एक विशिष्ट शैली उर्दू है पर उसे जो समान अधिकार दिया जा रहा है, वह भाषा के क्षेत्र का पाकिस्तान है। हिन्द की एक राष्ट्र भाषा थी; पर आज जो उसके विभिन्न रूप प्रान्तों में प्रचलित हैं उनको राष्ट्रभाषा के लिए समन्वित किया जाय तो संस्कृत प्रधान हिन्दी भाषा ही फल होगा। अतएव राष्ट्र भाषा के निर्माण के लिए व्रत लेकर शुद्ध-हिन्दी लिखो। कुछ ही समय में शब्दों का आदान प्रदान हो जावेगा और उस भाषा का प्रबल प्रचार होगा जो आज भी यात्री तीर्थों में बोलते हैं। संस्कृत जैसी भाषा की अतुल शब्द राशी आज हमारी सबकी बपौती है, तब विदेशी भाषा से शब्द ग्रहण करना याचक वृत्ति का द्योतक होगा, कोई राष्ट्राभिमान का नहीं। राष्ट्र भाषा के शब्दों की प्राचीनता और परम्परा के महत्त्व को मत भूलो। पेगम्बर मुहम्मद तक ने जन्नत (स्वर्ग) की कल्पना करते समय हिन्दी के तीन शब्दों को अपनाया है; कुर्आन में मुश्क, जरञ्जबीरा (शृङ्गवेर) और कपूर आज भी सुरक्षित हैं। संस्कृत से अनगिनत योरोपिय भाषाओं का जन्म हुआ। उसके शब्दों के विकृत रूप ही तो मदर, फादर हैं। ऐसी भूतकालीन अंतर राष्ट्रीय भाषा को अपनाना तो अभी दूर है पर संकृत गर्भित हिन्दी को अपनाकर प्रान्तीय भाषाओं को समझने वालों को निकट बुलाकर राष्ट्र को संगठित करना है। मंत्र तो भाषा में होगा, भाषा का स्वरूप संस्कृत गार्भित होगा तभी तो वह सर्व सुलभ होगा। ऐसी सर्व सुलभ भाषा प्रस्तुत है; व्यवहार करना भर शेष है।

भारत की विभिन्न भाषाओं का उद्गम एक है तो विभिन्न लिपियाँ भी एक ब्राह्मी लिपि की पुत्रियाँ है। 'नागरी लिपि' सभी के लिए सरल, सुलभ और परिचित है। राष्ट्र भाषा का वाहन यदि नागरी लिपि हो जाय तो राष्ट्र के जन-समुदाय तक सन्देश पहुँचाने में बाधा नहीं होगी। अखड भारत की रक्षा का यह प्रथम साधन होगा।

—सम्पादक।

एक लिपि ?

(गुजराती)

आ वख्ते कई प्रकार थी उन्नति नी महनत थइ रही छे। 'एवा समयमां एक एवूं वृक्ष उगाववूं जोइये जेथी एक भाषारूपी सर्व्वप्रिय फल फले। भारत ना जुदा जुदा प्रान्तोनी जुदी जुदी बोलिओ ने एक लिपि माँ लखवूं ते आशारूप फल नूं देवानुं वृक्ष छे। दरेक प्रान्तिक बोलिओ ने सहज करवानी पहली सीढ़ी तेमने एक सामान्य सर्व-सुगम लिपि रूपी लुगडुं पहरावी देवूं छे, जेथी जणाय के वास्तविक ए बधी सगी बहिनो छे। एक लिपि करी देवाथी प्रत्येक भाषा प्रत्येक प्रान्तवासियों ने सन्मुख थइ जशे अने सहजमाँ भणी समझी जशे। ए बात तो निर्विवाद छे के भाषा नो जेटलो प्रचार थशे तेटली तेनी उन्नति वधशे। भणवा-वाला अधिक मलवा थी लेखक तथा प्रकाशक सर्वेने लाभ छे।

आनंदनी बात छे के बालबोध अक्षरज ऐवा छे जे बधा भारतनी जुदी जुदी भाषाओ माँ स्पष्ट रूप माँ लखी शकाय छे। भणवामाँ व्यर्थ समय नष्ट नथी करता। तमे भारतनी भलाई माटे देवनागरी अक्षरों ने सीखवूं पोतानूं कर्तव्य समझो शीखो।

(तामिल)

उलहत्तिल् इडैविडामुयच्चिनिलेपेय असाध्यमानकार्यं कूड सिद्धि क्किवरुहिरदु नियममाहवे काणप्पडुहिरकालत्तिल् इकार्यं येन् सिद्धिक्किवरक्कूडादु। नल्ल शेजिह-प्पानदेशत्तिल् ओरुविरैयै वेदत्ताल् येरुमुदानदिल्लामल् साधारणमान जलप्पाच्चलाले अदु फलत्तै कोडुक्किरदु। भारतखण्डत्तिल् विंळगुहिर नानाप्रकारमानदेशात्तिन् नाना-प्रकारमान भाषैहळै ओरेयंज्हुत्तिले बहुदुवदे अन्दमनोरथत्तिर्क्कनुगुणमान फलत्तैकोड्-कुकूडिय प्रधानांकुरमाह यिरुक्किरदु। येनेण्ड्राल् अनेकदेशत्तिन् वार्त्तैहळै सर्व-साधारणमाक्कुवदर्कु मुदल्पडि सर्वसुगमएकलिपि वस्त्रत्तै धरिक्कच्चेयवदेयाम्। अनादुले चित्रविचित्रमान् लिपियाहिर वस्त्रंगळै विट्टु ओरे विदमान वस्त्रात्तै धरित्तुक्कोडु ओरुदेशत्तै विट्टु मत्तोरुदेशत्तिर्कं वन्दाल् सहज माहवे पडिक्कलाम् आनाल् अन्द लिपियै कोञ्चपरिश्रमत्तालेयै कत्तुक्कोळ्ळलाम् भाषैयानदु अधिकमाह प्रचारत्तिर्कुं वन्दाल् अनुनाले भाषैक्कुमुन्नतिये तविरकोरैत्तलिल्लै येन्पदु निस्संशयमे।

(पृ० १० का शेषांस)

नहीं होगा ! मनोवैज्ञानिक जीवन का यही धर्म है, सम्पूर्ण पाश्चात्य संसार इसी को मानता है। सह शिक्षा को युग-धर्म, उभय पक्ष को पूर्ण स्वतन्त्र मानकर एक इन्कलाब कर रहा है।

एक कालेज की छात्रा निकट से टहलती हुई निकल गई। पर रजनी अवसर आने पर पीछे सरक गए बोल न सके। पर रमेश ने शेक्सपीयर की एक पंक्ति पढ़ ही दी। मन्थर गति से वह बाला चली जा रही थी। रमेश उसके रूप और यौवन के विरुद् गा रहा था। नतमस्तक रजनी मूर्तिवत् मौन था। रमेश को यह व्यवहार बहुत खला। खरी खोटी रजनी ने सुन ली। वह रमेश को कह न सका कि वह जाने वाली उसकी बहिन थी।

राष्ट्रीय भाषा

एकराष्ट्रीयत्वाचीं तत्वें आतां हळूं हळूं आमच्या भारतवासीयांच्या हृदयांत प्रकाशित होऊन, त्यांची उज्ज्वल दीप्ती सर्व भरतखण्ड भर पसरत चालली आहे. भरतखण्ड हें एक राष्ट्र बनविण्याच्या अनेक खटपटी आमच्या विद्वान, समञ्जस व विचारी भारतीय देशाभिमानी स्वदेशबान्धवांकडून होत आहेत, हें खरोखर आमच्या निकृष्ट दशेस पोंचलेल्या देशाच्या अभ्युदयाचें द्योतक होय. आम्हां भारतीयांस आज जो एकराष्ट्रीयत्वाचा महार्ह नवरत्नांचा हार गुम्फावयाचा आहे, त्यातच "स्वराष्ट्रीय एक लिपि व स्वराष्ट्रीय एक भाषा" या आमोल्य रत्नांचाही पण समावेश करावा लागणार आहे. हें राष्ट्रीय बृहत् कार्य आमच्या स्वदेशभक्तांनीं काया, वाचा, मनें करून सिद्धीस नेणें अत्यावश्यक आहे।

'देवनागरी' लिपि लिहिण्याला जशी सोपी आहे, तशीच 'हिन्दी' भाषा बोलण्याला सोपी आहे, आणि विशेष गुण या भाषेंत हा आहे कीं, ही स्वभावतः मोठी, गम्भीर, प्रौढ व जोरदार अशी आहे। परमेश्वरानें आपल्या अलौकिक चातुर्यानें आर्य भूमीची मातृ भाषा जी "संस्कृत" तिची सख्खी बहीण आर्यवीर माता 'हिन्दी' भाषा आपल्या हिन्दी देशजननीच्या सत्पुत्रां करितां व स्वदेशाच्या उत्कर्ष करितांच म्हणून निर्माण केली आहे कीं काय कोण जाणे !

(मराठी) —अनन्त बापुशास्त्री जोशी।

उर्दू की लिपि

"जब हिन्दुस्तान में उर्दू की दागबेल (नींव) पड़ी तो इब्तदा (आरम्भ) में उसे नागरी में लिखा जाता था, लेकिन जब उसने जबान की हैसियत अख्तियार करनी शुरू कर दी तो फारसीदाँ उसको फारसी खत में लिखने लगे। अंगरेजों का दौर दौरा हुआ तो यही उर्दू रोमन खत में लिखी जाने लगी। मुख्तसरन (संक्षेप) यह कि हिन्दुस्तान की यह मुश्तरका जबान (साझे की भाषा) जिस तरह एक से ज़ायद (अधिक) नामों से मौसूम (स्थित) है, यानी कोई उसको 'उर्दू' कोई 'हिन्दी' और कोई 'हिन्दुस्तानी' कहता है, उसी तरह उसके रस्मे खत भी 'नागरी' 'फारसी' और 'रोमन' हैं।" * (दर असल मौजूँ रस्मे खत न होने से उर्दू की काफ़ी फजीहत हुई। मुश्तरका जबान की दागबेल बुनियादी न होने से नागरी का मुकाबला न कर सकी पर मुस्लिम लीग व कांग्रेस की हमदर्दी से मैदान में शान जमाती रहती है) "हैदराबाद दकन में टाइप बनाने के लिए बड़ी जद्दोजहद (रगड़ झगड़) की गई लेकिन नतीजा खातिरख्वाह (संतोषप्रद) न निकला उर्दू की असल दुश्वारी उसका फारसी रस्मेखत है जो खुद उसके वतन ईरान ने तबायत के लिए तर्क कर (छोड़) दिया है।" † (उर्दू)

---

* उर्दू रस्मेखत, इन्तज़ामी मशीन प्रेस, हैदराबाद दकन सन् १९४० ई०, पृ० १३। † वही, पृ० ब दबीचा।

मधुकरा

(संस्कृत)

उत्तिष्ठत सनह्यध्वमुदाराः केतुभिः सह ।
सर्पा इतरजना रक्षांस्यमित्राननु धावत् ॥

"उठो वीर ! तैयार होकर ध्वज को हाथों में थाँभ लो । जो सर्प है, लम्पट हैं, अन्य हैं, रक्षस हैं, शत्रु हैं ; उन पर धावा कर दो ।"

× × ×

प्राण्याद्दुपकाराद्वा यो विश्वसिति शत्रुषु ।
सुषुप्त इव वृक्षाग्रात्पतित प्रतिबुध्यते ॥

"जो शत्रु का प्रेम तथा उपकार देखकर विश्वास करता है वह वृक्ष के अग्रभाग पर सोए हुए की तरह गिर कर जागता है ।"

× × ×

व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं
भवन्ति मायाविषु येन मायिनः ।
प्रविश्यहिघ्नन्ति शठास्तथाविधा-
नसंवृताङ्गान् निशिता इवेषवः ॥

"जो कपटी के साथ कपटी नहीं बनते वे मूढ़बुद्धि मनुष्य हार खाते हैं ; क्योंकि बिना कवच के खुले अङ्ग वाले को तीक्ष्ण बाण की तरह, कपटी दुष्ट लोग निष्कपट के हृदय में प्रवेश करके उसे मारते हैं ।"

(अपभ्रंश)

अम्हे थोवा, रिउ बहुअ
काअर एम्व भणन्ति ।
मुद्धि निहाल हि गअण-
यलु कइ जण जोण्ह करेन्ति ॥

"हम थोड़े हैं रिपु बहुत,
कायर ऐसा बोलें ।
मूढ़ निहार तू गगन में
कइ जन जोत करें ॥"

× × ×

(ढिंगल)

"अस लेगो अणदाग, पाप लेगो अणनायी ।
गो आडा गवडाय, जिको बहतो धुर वामी ॥
नवरोजे नह गयो, न गौ आतसां नवल्ली ।
न गौ झरोखाँ हेठ, जेठ दुनियाण दहल्ली ॥
गहलोत राण जीति गयो,
दसण मूँद रसणा दसी ।
नीसास मूक भरिया नयण,
तो मृत शाह प्रतापसी ॥

"हे गहलोत राणा प्रताप, तेरी मृत्यु पर अकबर पातशाह ने, दाँतों बीच जीभ दबाकर निश्वास के साथ आँसू टपकाये क्योंकि तेरे घोड़े पर दाग नहीं लगा । तेरी पगड़ी किसी के आगे नहीं झुकी । तेरा यश गाया गया । राज्य के धुरे को बाँये कंधे से चलाता रहा । नौ रोज में नहीं गया । और न आतसों (बादशाही डेरों) में । शाही झरोखे के सन्मुख खड़ा न रहने वाले, ए प्रताप ! तूँ सर्व प्रकार से विजयी रहा ।"

मधुकरा

(संस्कृत)

"असिंधुसिंधुपर्यन्ता यस्यं भारत भूमिका ।
पितृ भूःपुण्यभूश्चैव सवै हिन्दुरीति स्मृतः ॥
—स्वातंत्र्यवीर सावरकर ।

× × ×

(बंगाली)

"चित्त जेथा भयशून्य उच्च जेथा शिर, ज्ञान जेथा मुक्त, जेथा गृहेर प्राचीर आपन प्राङ्गणतले दिवस शर्वरी वसुधारे राखे नाइ खण्ड क्षुद्र करि, जेथा वाक्य हृदयेर उत्समुख हते उच्छवसिया उठे, जेथा निर्वासित स्रोत । देशे-देशे दिशे-दिशे कर्मधारा धाय अजस्र सहस्रविध चरितार्थताय जेथा तुच्छ आचारेर मरुबालुराशि विचारेर स्रोतःपथ फेले नाई ग्रासि पौरुषेर करेनि शतधा; नित्य जेथा तुमि सर्व कर्म चिन्ता आनन्देर नेता निज हस्ते निर्दय आघात करि पितः भारतेरे सेइ स्वर्गेर करो जागरित । (विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर की वे पक्तियाँ जो डॉ० मुखर्जी ने बिलासपुर अधिवेशन में उद्धृत की थीं ।)

(पञ्जाबी)

"ने तेरा ए जादू चले दुष्ट पापी ।
ए कर वार एथे ना खोटी प्रतापी ।
ए खंजर तेरी झूठदी धुई लिसके ।
धरम साम्हणे देख हुण ही है खिसके ।
मैं हाँ सिंहणी मौत मरनी मैं जाणा ।
ते अड़ना, ते लड़ना, ते दुश्मन मुकाणा ।'
दे कलगी धरा ! सत गरा शाह पूरे ।
बनी आन इज्जतते है करम पूरे ।
दिलेरी दई हौसला नाल देई ।
मरां मारके फेर शरनी समेई ।
है हथ सँबया ! उठकर हुण दिलेरी ।
तूं लड़ पीणदा फड़ लाया इक वेरी ।
फड़ी हुण कटारी उसे मुढ अन्दर ।
निमै साथ विआह दो, बचे धरम मन्दर ।
खभोदे सु सीने जो कीने है वाला ।
चला देह सूं पार पापों सुखाला ।"

(इक दम कुड़ते अन्दरों कटारी खिच के बिजली दी फुरती दी तरह खभो दिती ।) विधवा वलवन्तकौर ने कामी तुगलक को पाठ पढ़ा दिया)

× × × ×

दिल्ली रेडियो बोला, १४ सेप्ट० को सर सरपली रादाकिसन ने करांची में गाँधी जी का बुत खोला ।

—बुत !!! माशूक और दार्शनिक का संबंध नया तो नहीं है । उमरख्याम आशिक और दार्शनिक दोनों थे ।

× × × ×

मायाजाल

अमियबाला ने पूछा "ओ मालवीय बाबा ! तुम्हारे विश्वविद्यालय के छात्र क्या तुम्हारी बात मानकर मेरे उद्धार के लिए कुछ नहीं करेंगे ?

—छात्रों के नेता बहुत कुछ रंग-मंच पर करेंगे अभी तो 'कॉफी हाउस' के ऊपर पैर में घूँघरू बाँधे नित्य रिहर्सल कर रहे हैं।

× × × ×

नौआखली के सहायतार्थ नाटक होगा स्टूडेन्ट कॉंग्रेस थैली भेजेगी।

—किसे ? सुना है आधा धन तो बिहार जावेगा।

× × × ×

हिन्दू विश्वविद्यालय की स्टूडेन्ट कॉंग्रेस का प्रस्ताव हुआ कि 'हिन्दू' शब्द हटाकर विश्वविद्यालय के नाम को जातियता से दूर रखा जावे।

—धर्म के नाम की दूकान बन्द हो जावेगी। नई पैदावार को पता नहीं कि कितनी हिन्दू विधवाओं का स्त्री-धन इसमें लगा है।

× × × ×

अगस्त आन्दोलन में छात्रों ने ठोस काम किया। अंग्रेजों को भगाने के लिए उनकी आवश्यकता पड़ेगी—एक नेता।

—तब आप जेल में ए क्लास में होंगे। पर मंत्र ठीक दिया, "चढ़ जा बेटा सूली पर"।

× × × ×

हम स्वाधीनता के द्वार पर खड़े हैं।

—तब भीतर क्यों नहीं घुस जाते।

× × × ×

लीग अड़ँगा लगाती ही रहती है।

—हसीनों की दोस्ती भी बुरी और दुश्मनी भी।

× × × ×

हिन्दू विश्वविद्यालय में भाषण देते श्री जयप्रकाश नारायण बोले, "हिन्दू महासभावादी कामचोर हैं। अगस्त आन्दोलन में उन्होंने कुछ नहीं किया।"

—आपको क्या पता आप तो बंद थे। आपका लेबिल लगाए मर रहे थे और आप नेताओं को छुड़ाने में लगे थे।

× × × ×

नौआखली के लिए हम लोगों ने बहुत सोचा और बहुत कुछ किया है।

—हाँ, हाँ, इसमें क्या सन्देह है। बहुत प्रस्ताव पास किए हैं।

× × × ×

मु०—ह० मा० सप्रे, श्रीलक्ष्मीनारायण प्रेस, जतनबर, बनारस।

अनुशासन संघर्ष स्वतन्त्रता

हिन्दू विद्यार्थी संघ

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

परिचयः–

हमारा संघ अ० भा० हिन्दू विद्यार्थी संघ का एक घटक है। जनवरी सन् १९४४ में डा० मुखर्जी के कर कमलों से इसका उद्घाटन हुआ था।

उद्देश्यः–

१. हिन्दू राष्ट्र के संरक्षण, संवर्द्धन, एवं संगठन के लिये छात्रों का देश व्यापी संगठन करना।

२. हिन्दू विद्यार्थी मात्र के लिये अनिवार्य सैनिक शिक्षा का प्रबन्ध करना।

३. हिन्दू विद्यार्थियों की समस्त संकटों और कठिनाइयों में सहायता करना।

आसिन्धुसिन्धु पर्यन्ताः यस्य भारत भूमिकाः,
मातृभूः पितृभूश्चैव स वै हिन्दुरितिस्मृतः

वन्दे मातरम्

आगामी वसन्त पंचमी को हमारा नया प्रकाशन होगा। संघ द्वारा प्रकाशित लेख माला यथा साध्य प्रत्येक मास प्राप्त होगी। क्या आप उसके ग्राहक हैं ?

पताः–**नागरी भवन, पो० लङ्का**

बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी प्रेस, बनारस।